छान्दोग्योपनिषद् में 'भूमा'विज्ञान का उपदेश[35]

दिनेश.माछी[36]

नारद को उपदेश प्रदान करनेवाला सनत्कुमार एक श्रेष्ठ उपनिषद्कालीन तत्वज्ञ माना जाता है। सनत्कुमारका शब्दशः अर्थ 'जीवनमुक्त'[37] होता है । इसका समग्र तत्वज्ञान इसके द्वारा नारद को दिये गये उपदेश में प्राप्त है, जो छान्दोग्योपनिषद् के सप्तम अध्याय में ग्रथित किया गया है ।

छान्दोग्योपनिषद् में जो नारद- सनत्कुमारकी आख्ययिका है वह तो परा विद्याकी स्तुतिके लिये है । जो अपने सारे कर्तव्य पूर्ण कर चूके थे और सर्वविद्यासम्पन्न थे उन देवर्षि नारदको भी अनात्मज्ञ होनेके कारण शोक हुआ । अथवा भाष्यकार शङकराचार्य कहते है-' नान्यदात्मज्ञानान्निरतिशयश्रेयःसाधनमस्तीत्येतत्प्रदर्शनार्थं सनत्कुमारनारदाख्यायिका –रभ्यते।'[38] अर्थात् आत्मज्ञानसे बढकर और कोई कल्याणका साधन नहीं है, यह प्रदर्शित करनेके लिये सनत्कुमार-नारद आख्यायिकाका आरम्भ किया जाता है । सम्पूर्ण विज्ञानरूप साधनोंकी शक्तिसे सम्पन्न होनेपर भी देवर्षि नारद का कल्याण नहीं हुआ, इसीसे वे उत्तम कुल,विद्या,आचार और नाना प्रकारके साधनोंकी सामर्थ्यरूप सम्पत्तिसे होनेवाले अभिमानको त्यागकर श्रेयःसाधनकी प्राप्तिके लिये एक साधारण पुरुषके समान सनत्कुमारजीके समीप गये। इससे श्रेयःप्राप्तिमें आत्मविद्याका निरतिशय साधनत्व सूचित होता है ।

नारदजी ब्रह्मनिष्ठ योगीश्वर सनत्कुमारके पास शिष्यरूपसे गये और कहा- 'अधीहि भगवः' अर्थात् हे भगवन् ! मुझे उपदेश कीजिये । अपने प्रति नियमानुसार उपसन्न हुए उन नारदजीसे सनत्कुमारने कहा- 'तुम आत्माके विषयमें जो कुछ जानते हो उसे बतलाओ' तब मैं तुम्हे तुम्हारे ज्ञानसे आगे उपदेश करूंगा । सनत्कुमारजीके ऐसा कहनेपर नारदजी बोले –

'ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यं राशिं दैवं निधिं वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्रविद्यां नक्षत्रविद्यां सर्पदेवजनविद्यां एतद्भगवोऽध्येमि ।।'[39] अर्थात् हे भगवन् ! मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास-पुराणरूप पाँचवाँ वेद, व्याकरण, श्राध्धकल्प, गणित, उत्पातज्ञान, निधिशास्त्र, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, निरुक्त, ब्रह्मविद्या, भूतविद्या, क्षत्रविद्या (धनुर्वेद), नक्षत्रविद्या, (ज्योतिष) सर्पविद्या, नृत्य - संगीत आदि यह सब मैं जानता हूँ ।

---

[35] Presented this paper in National Seminar ,organised by Sanskrit Seva Samiti on the eve of its Silver Jublee celebration on 19th Sept.2007 at Santram Mandir,Nadiad,Gujarat.

[36] संस्कृत विभागाध्यक्ष, सरकारी विनयन कॉलेज धानपुर, जि. दाहोद, गुजरात

[37] महाभारत, शान्तिपर्व, 326-35

[38] छान्दोग्योपनिषद्-शाङ्करभाष्य, 7-1

[39] छान्दोग्योपनिषद्, 7/1/2

नारदजी ये सब विद्या जानते थे फिरभी उन्होने कहा - सोऽहं भगवो मन्त्रविदेवास्मि नात्मवित् श्रुतं हि एव मे भगवद्दृशेभ्यस्तरति शोकमात्मविदिति[40].... अर्थात् हे भगवन् ! मैं केवल मन्त्रवेत्ता ही हूँ, आत्मवेत्ता नहीं हूँ । मैंने आप जैसोंसे सुना है की आत्मवेत्ता शोकको पार कर लेता है, लेकिन मैं तो अभी शोक कर रहा हूँ, शोकसे मेरी मुक्ति नही हुई, ईस लिये मुझको शोकसे पार कर दीजिये । नारदजीकी यह बात सुनकर सनत्कुमारनें उनसे कहा- 'यद्वै किञ्चैतदध्यगीष्ठा नामैवैतत्[41] ।' अर्थात् तुम यह जो कुछ जानते हो वह नाम ही है । नाम से अधिक वाक्, वाक् से मन, मनसे संकल्प, संकल्पसे चित्त, चित्त से ध्यान, ध्यान से विज्ञान, विज्ञान से बल, बल से अन्न, अन्न से जल, जल से तेज, तेजसे आकाश, आकाश से स्मरण, स्मरण से आशा और आशा से प्राण ही अधिक बढकर है । जिस प्रकार रथचक्रकी नाभी में अरे समर्पित रहते हैं उसी प्रकार इस प्राणमें सारा जगत् समर्पित है । सनत्कुमारजी आगे कहते है सत्य, विज्ञान, मति, श्रध्धा, निष्ठा और कृति ही जानने योग्य है । वह कृति भी जिस समय सुख मिलता है तभी होती है । अतः ' सुख की ही विशेष रूपसे जिज्ञासा करनी चाहिये ' यह सुनकर फिर नारदजी सनत्कुमार को कहता है की हे भगवन् ! मैं सुखकी ही विशेष रूपसे जिज्ञासा करता हूँ । इस प्रकार सुखविज्ञान के प्रति अभिमुख हुए नारदजीको सनत्कुमारजी 'भूमा' विज्ञान का उपदेश करते है ।

भूमा ही जानने योग्य है :

सनत्कुमारजी कहते है की- 'यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति भूमैव सुखं भूमा त्वेव विजिज्ञासितव्य इति'[42] अर्थात् व्यापकता में ही सुख है, अल्पमें सुख नही हैं, सुख 'भूमा'ही है अतः भूमा की विशेष रूपसे जिज्ञासा करनी चाहिए । भूमा से नीचे के पदार्थ न्यूनाधिक होनेके कारण अल्प हैं, अतः उस अल्पमें सुख नहीं हैं ; क्योंकी अल्प तो अधिक तृष्णाका हेतु है और तृष्णा दुखका बीज है । तथा लोकमें दुखके बीजभूत ज्वरादि सुखरूप नहीं देखे गये । अतः 'अल्पमें सुख नहीं हैं ।' यह कथन ठीक ही है । इसलिये भूमा ही सुखरूप है ।

भूमाके स्वरूपका प्रतिपादन :

यह भूमा किस लक्षणोंवाला है सो बतलाते है- 'यत्र नान्यत्पश्यति नान्यच्छृणोति नान्यद्विजानाति स भूमाथ यत्रान्यत्पश्यत्यन्यच्छृणोत्यन्यद्विजानाति तदल्पं यो वै भूमा तदमृतमथ यदल्पं तन्मर्त्यम् ।'[43] अर्थात् जहाँ कुछ और नहीं देखता, कुछ और नहीं सुनता तथा कुछ और नही जानता वही भूमा है । किन्तु जहाँ कुछ और देखता है, कुछ और सुनता है एवं कुछ और जानता है वह अल्प है । जो भूमा है वही अमृत है और जो अल्प है वह मर्त्य है ।

सर्वत्र भूमा ही है :

भूमा ही नीचे है, वही ऊपर है, वही पीछे है, वही आगे है, वही यह सब है । अब उसीमें अहंकारादेश किया जाता है – मैं ही नीचे हूँ, मैं ही ऊपर हूँ, मैं ही पीछे हूँ, मैं ही आगे हूँ, मैं ही यह सब हूँ । सब कुछ वही है । अब आत्मारूपसे ही भूमा का आदेश

---

40 वही, 7/1/3

41 वही

42 छान्दोग्योपनिषद्, 7/13/1

43 वही, 7/14/1

किया जाता है । आत्मा ही नीचे है, आत्मा ही ऊपर है, आत्मा ही पीछे है, आत्मा ही आगे है, आत्मा ही यह सब है । इस प्रकार देखनेवाला, इस प्रकार मनन करनेवाला तथा विशेष रूपसे इस प्रकार जाननेवाला आत्मरति, आत्मक्रीड, आत्ममिथुन और आत्मानंद होता है; वह स्वराट् है;सम्पूर्ण लोकमे उसकी यथेच्छ गती होती है । इस प्रकारके लक्षणोंवाला वह विद्वान् जीवित रहता हुआ ही स्वाराज्यपर अभिषिक्त हो जाता है तथा देहपात होनेपर भी स्वराट् ही होता है । यहाँ 'स स्वराट् भवति' इत्यादि वाक्यसे उसकी निवृत्तिका निरूपण किय जाता है ।

इस प्रकार जाननेवाले के लिये फलका उपदेश :

स्वाराज्यको प्राप्त हुए इस प्रकृत विद्वान के लिये सत् का आत्मस्वरूपसे ज्ञान होनेके पूर्व प्राणसे लेकर नाम पर्यन्त पदार्थोंके उत्पत्ति और प्रलय स्वात्मासे भिन्न होते थे । किन्तु अब सत् का आत्मत्व ज्ञात होनेपर वे अपने आत्मासे ही हो गये । इसी प्रकार विद्वान का और भी सब व्यवहार आत्मासे ही होने लगता है । इस विषयमें यह मंत्र है ।- ' न पश्यो मृत्युं पश्यति न रोगं नोत दुखतां सर्वं ह पश्यः पश्यति सर्वमाप्नोति सर्वश इति[44]। अर्थात् विद्वान न तो मृत्युको देखता है, न रोगको और न दुखत्वको ही । वह विद्वान सबको आत्मरूप ही देखता है; अतः सबको प्राप्त हो जाता है ।

' आहारशुध्यौ सत्वशुध्धिः सत्वशुध्यौ ध्रुवा स्मृतिः स्मृतिलम्भे सर्वग्रंथीनां विप्रमोक्षः[45]...' अर्थात् आहारशुध्धि होने पर अन्तःकरणकी शुध्धि होती है, अन्तःकरणकी शुध्धि होने पर निश्चल स्मृति होती है तथा स्मृतिकी प्राप्ति होने पर सम्पूर्ण ग्रन्थियोंकी निवृत्ति हो जाती है इस प्रकार जिनकी वासनाए क्षीण हो गयी थी उन नारदजीको भगवान् सनत्कुमारने अज्ञानान्धकारका पार दिखलाया ।

समालोचना :

यहाँ जो भूमा शब्दका प्रयोक किया गया है वही भूमा शब्दका उल्लेख शतपथ और तैत्तिरीय ब्राह्मणमें भी मिलता है । जैसे- ' श्रीर्वै भूमा[46]' अर्थात् आत्मरूप स्वराट् का जो ऐश्वर्य – समृध्धि है वही भूमा है । शतपथब्राह्मणमें दूसरी जगह भी भूमा का निर्देश मिलता है- 'भूमा वै सहस्रम्[47]' तैत्तिरीयब्राह्मणमें भी भूमा का निर्देश मिलता है - 'पुष्टिर्वै भूमा[48]।' इस तरह ब्राह्मण ग्रन्थोमें भी 'भूमा' शब्द विविध अर्थमें प्रयुक्त है । श्री,सहस्रम्,पुष्टी आदि 'भूमा' शब्दके अर्थ बहुलता का द्योतक है । नारदजी के पास ऋग्वेदादि सब ग्रन्थो का ज्ञान था, लेकिन ये सब ज्ञान सनत्कुमारजीकी दृष्टिसे केवल नाम मात्र ही था । सिर्फ वाणीका ही वैभव था । अतः इस वैभवसे नारदजी मन्त्रवेत्ता था लेकिन आत्मवेत्ता नहीं था । आत्मवेत्ता बनने के लिए शरीर के भीतरकी ओर अंतर्मुख होकर आध्यात्मिक सुखवाद का ज्ञान जरूरी था । वाक्, मन, संकल्प, चित्त, ध्यान, विज्ञान, बल, अन्न, जल, तेज, आकाश, स्मरण, आशा और प्राण ये सब एक से बढकर एक तत्व है । रथ चक्रकी नाभिमें अरे समर्पित रहते है उसी प्रकार प्राणमें सारा

---

44 छान्दोग्योपनिषद्, 7/26/2

45 वही

46 शतपथब्राह्मणम् 3/1/1/12 ।।

47 वही,3/3/3/8

48 तैत्तिरीयब्राह्मणम् 2/9/8/3/

जगत् समर्पित है । जो व्यक्ति इस प्रकारका आध्यात्मिक सुख प्राप्त करलेता है वह व्यापकतामें ही राचता है । उसीको ही 'भूमा' ज्ञान कहा जाता है ।

सनत्कुमार के द्वारा की गयी भूमा शब्दकी मीमांसा इसके तत्वज्ञानका एक महत्वपूर्ण भाग मानी जाती है । इस तत्वज्ञानके अनुसार सृष्टि के हरएक वस्तुमात्रमें एक ही परमात्मा का साक्षात्कार होने की अवस्था को भूमा कहा गया है । इस साक्षात्कार से मनुष्यको अत्युच्च आनंद की प्राप्ति होती है, जिसकी तुलना में स्त्री, भूमि, ऐश्वर्य आदि ऐहिक वस्तुओं से प्राप्त होनेवाला आनंद तुच्छ प्रतीत होता है ।

यहाँ नारद-सनत्कुमारजी की आख्यायिकामें ' वसुधैव कुटुम्बकम् ' एवं 'समता' की भावना व्यक्त हुई है । भगवद्गीतामें समत्वको ही योग कहा है- 'समत्वं योग उच्यते[49] ।' समस्त विश्व एक परिवार है इसलिये सभी भेदभाव का त्याग करके प्रत्येक जीवके प्रति अहिंसा का भाव, स्वकार्यमें अहंताका अभाव, स्वार्थ वृत्तिका त्याग, वाणी और वर्तनमें समता यह सब गुण जब कोई व्यक्तिमें आ जाते है तब ऐसे व्यक्तिका दृष्टिकोण बदल जाता है । ऐसे व्यक्तिको सभी जगह बहुलता-व्यापकता का दर्शन होता है । सुख-दुःखादि कोई द्वन्द्व उन्हें बाधक नहीं होते । इस प्रकारके भाव रखनेवाले महान व्यक्तिकी कीर्ति स्वयं भूमा को प्राप्त कर लेती है ।

इस आख्यायिका की फलश्रुति यह है की यहाँ नारदजी समस्त विश्व का प्रतिनिधि है । विश्व शान्ति के लिये यह भूमा उपदेश सराहनीय है । साधक को जब आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है, उस समय उसे भूमा तत्वका संपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है । इस प्रकार, आत्मा ही इस सृष्टिके उत्पत्ति का कारण है, एवं इसी आत्मासे मानवीय आशा एवं स्मृति निर्माण होती है । इसी आत्मासे सृष्टी के हरएक वस्तुका विकास होता है, एवं विनाश के पश्चात् सृष्टि की हरएक वस्तु इसी आत्मामें ही विलीन होती है, इस भूमा विज्ञान का यही तात्पर्य है ।

****

[49] भगवद्गीता 2/48